अध्याय–1

भारत का वैभवपूर्ण अतीत

भारत भूखण्ड एक पूर्ण भौगोलिक इकाई रहा है। विष्णु पुराण में उल्लेख मिलता है कि समुद्र के उत्तर एवं बर्फीले प्रदेश के दक्षिण में जो प्रदेश है उसका नाम भारतवर्ष है एवं हम सभी भारतीय उसकी संतति है। इसका अधिकांश भाग उष्णकटिबन्धीय वातावरण के क्षेत्र में आता है। उत्तर में हिमालय पर्वतीय क्षेत्र है, जिसमें बल्ख, बदख्खाँ, जम्मू कश्मीर, कांगड़ा, टिहरी, गढवाल ,कुमायूँ, नेपाल, सिक्कम, भूटान, असम व हिमालय की ऊँची पर्वत श्रेणियाँ सम्मिलित हैं। पश्चिम में हिन्दुकुश सफेदकोह, तुकेमान तथा किर्थर पर्वतश्रेणियों ने उत्तर से दक्षिण की विस्तृत होकर, इसे पश्चिमी क्षेत्र से पृथक किया है।

भारतीय इतिहास की जानकारी के स्रोत

वस्तुतः इतिहास के अन्तर्गत मानव का सम्पूर्ण अतीत समाहित रहता है, चाहे वह किसी भी क्षेत्र से सम्बन्धित हो। विज्ञान, अर्थशास्त्र , समाज , राजनीति तथा धर्म व दर्शन आदि सभी क्षेत्रों में किये गये कार्य कलाप इतिहास की श्रेणी में आते हैं। अतीत में मानव के जिन क्रिया–कलापों को तथ्यों के आधार पर हम पूर्ण विश्वास के साथ प्रमाणित कर सकें, उन्हें इतिहास में रख सकते हैं क्योंकि अतीत का प्रत्यक्षीकरण नहीं हो सकता, केवल उसके विषय में कुछ स्रोत के रुप में साक्ष्य प्राप्त होते हैं जिनके आधार इतिहासकार इतिहास का निरूपण करता है। वर्तमान में इतिहासकार अतीत की केवल घटनाओं की जानकारी देना ही उपयुक्त नहीं समझते बल्कि उसके कारणों की भी विस्तृत जाँच पड़ताल करते हैं। इसके मूल में मानव के आन्तरिक मनोगत भूमिका होती है और इतिहासकार का मानव संस्कृति का अध्ययन करना मुख्य उद्देश्य होता है।

अतीत की गतिविधियों की जानकारी प्राप्त करने के लिए इतिहासकार सभी प्रकार के साधनों को उपयोग करता है, इन साधनों को स्रोत, साक्ष्य और प्रमाण कहा जाता है। इन्हीं के आधार पर वह विश्वसनीय विवरण तैयार करता है। इसलिए कहा जाता है कि इतिहासकार इतिहास की पुनः रचना करता है। इतिहास की उन्हीं घटनाओं को तथ्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है जो साक्ष्य एवं प्रमाणों से सिद्ध हों। इसलिए इतिहासकार का मूल मंत्र है – 'नामूलं लिख्यते किंचित' (अर्थात् बिना मूल या आधार के कुछ नहीं लिखना चाहिए)। भारतीय इतिहास की जानकारी के स्रोतों को मुख्य रुप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. साहित्यिक स्रोत
2. पुरातात्विक व पुरालेखीय स्रोत।

साहित्यिक स्रोत

प्राचीन भारतीय इतिहास की जानकारी के साहित्यिक स्रोतों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(अ) धार्मिक साहित्य – ब्राह्मण साहित्य, बौद्ध सहित्य, जैन साहित्य

(ब) धर्मेतर साहित्य–ऐतिहासिक ग्रन्थ, विशुद्ध साहित्यिक ग्रन्थ, क्षेत्रीय साहित्य, विदेशी विवरण

(स) वंशावलियाँ – इतिहास के स्रोत के रूप में

(अ) धार्मिक साहित्य

ब्राह्मण साहित्य– ब्राह्मण साहित्य में सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद है। वेदों के द्वारा हमें सम्पूर्ण आर्य सभ्यता व संस्कृति की जानकारी मिलती है। वेद ज्ञान के समृद्ध भण्डार हैं। वेदों की संख्या चार है ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद व अथर्ववेद। सर्वाधिक प्राचीन ऋग्वेद है जिसमें 10 मण्डल व 1028 सूक्त हैं। प्रत्येक वेद के चार भाग हैं – संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद्। वेदों की व्याख्या संहिताओं में की गई है। ऋग्वेद छन्दों में रचा गया है।

यजुर्वेद में यज्ञों से सम्बन्धित विवरण मिलता है। सामवेद में आर्यों द्वारा गायी जाने वाली सामग्री है। अथर्ववेद की रचना अथर्वा ऋषि ने की थी। इसमें विषय भी विविध है। इसमें ब्रह्मज्ञान, धर्म समाज–निष्ठा, औषधि प्रयोग, शत्रुओं का दमन, रोग निवारण, तन्त्र–मन्त्र, आदि विषय सम्मिलित है। इसके उपरान्त यज्ञ और कर्मकाण्डों पर आधारित जो साहित्य रचा गया, वे 'ब्राह्मण ग्रन्थ' कहलाते हैं। आरण्यक ग्रन्थों में जिनकी रचना ऋषियों द्वारा वनों में की गई है,दार्शनिक विषयों का विवरण मिलता है, जबकि उपनिषदों में गूढ़ विषयों एवं नैतिक आचरण नियमों की जानकारी मिलती है। वैदिक साहित्य को

ठीक तरह से समझने हेतु वेदांग साहित्य की रचना की गई जिसके छः भाग हैं – शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्द एवं ज्योतिष। आयुर्वेद, धनुर्वेद, गंधर्ववेद व शिल्पवेद चार उपवेद भी हैं, जिनसे चिकित्सा, वास्तुकला, संगीत, सैन्य विज्ञान आदि की जानकारी मिलती है।

वेदों के उपरान्त विभिन्न ऋषियों द्वारा स्मृति ग्रन्थों की रचना की गई। इनमें मनुस्मृति व याज्ञवल्क्य स्मृति प्रमुख है। रामायण व महाभारत महाकाव्य भारतीय इतिहास की जानकारी के अथाह कोष है। इनसे समाज, धर्म व राजनीति की ऐतिहासिक जानकारी मिलती है। हमारे पुराण प्राचीन काल के इतिहास ग्रन्थ हैं। इनकी संख्या 18 है। इनमें मार्कण्डेय, ब्रह्माण्ड, वायु, विष्णु, भागवत एवं मत्स्य प्रमुख हैं। मत्स्य सर्वाधिक प्राचीन है। भारत के सांस्कृतिक इतिहास की सर्वाधिक जानकारी इन्हीं से मिलती है। इनके पाँच प्रमुख विषय है – सर्ग, प्रतिसर्ग, मनवन्तर, वंश, वंशानुचरित।

प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण में बौद्ध साहित्य की प्रमुख भूमिका रही है। बौद्ध साहित्य में सबसे प्राचीन ग्रन्थ त्रिपिटक है। ये तीन है सुत्तपिटक, विनय पिटक व अ ि ध म पिटक। इसलिए इनको त्रिपिटक कहा जाता है। इनमें बौद्ध धर्म के नियम आचरण सग्रहीत है। बौद्ध ग्रन्थों में दूसरा महत्वपूर्ण योगदान ज तक ग्रन्थो का है। इनमें गौतम बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाओं की तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक व आर्थिक पक्षों की जानकारी मिलती है। इनकी संख्या 549 है। पाली भाषा के अन्य बौद्ध ग्रन्थो में मिलिन्दपन्हो, दीपवंश व महावंश है। ि लिन्दपन्हो में यूनानी आक्रमणकारी मीनेण्डर व बौद्ध भिक्षु नागसेन के मध्य वार्ता का विवरण है। दीपवंश व महावंश में सिंहलद्वीप के इतिहास का वर्णन है।

पाली भाषा के अ

(iii) *क्षेत्रीय साहित्य –* क्षेत्रीय भाषाओं के ग्रन्थों में भी प्रचुर ऐतिहासिक सामग्री मिलती है। प्राचीन तमिल साहित्य संगम साहित्य कहलाता है। इनसे चोल व पल्लव शासकों के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है। इस साहित्य के प्रणेता अगस्त्य ऋषि थे। तेलगू ग्रन्थ धूर्जटि द्वारा लिखित कृष्णदेवराय विजयुम विजय नगर राज्य के शासक कृष्णदेवराय की उपलब्धियों की जानकारी देता है। राजस्थानी भाषा के ग्रन्थों में चन्दबरदाई का पृथ्वीराज रासो, पद्मनाभ का कान्हड़दे प्रबन्ध, बीठू सूजा का राव जैतसी रो छन्द, सूर्यमल मिश्रण का वंश भास्कर, नैणसी का नैणसी की ख्यात, बांकीदास की ख्यात आदि प्रमुख हैं।

(iv) *विदेशी विवरण (साहित्य) –* प्राचीन काल से ही भारत की सांस्कृतिक एवं आर्थिक उपलब्धियां विश्व को आकर्षित करती रही हैं। भारत के व्यापारिक सम्बन्ध विश्व के देशों से थे। धर्म व दर्शन का ज्ञान प्राप्त करने व अध्ययन हेतु लोग विदेशों से यहाँ आते थे। इसीलिये विदेशी लेखक भी भारत से प्रभावित हुए और उन्होंने भारत के सम्बन्ध में पर्याप्त विवरण दिया है लेकिन इस विवरण का सावधानी पूर्वक अध्ययन करने कीआवश्यकता है।

यूनानी साहित्य :– यूनानी लेखकों में टेसियस, हेरोडोटस, निर्याकस, एरिस्टोब्युलस, आनेक्रिट्स, स्ट्रेबो, एरियन एवं स्काई लेक्स प्रमुख हैं। सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुस्तक चन्द्रगुप्त के दरबार में यूनानी राजदूत मेगस्थनीज द्वारा लिखित 'इंडिका' है। यूनानी विवरणों से चन्द्र गुप्त मौर्य के प्रशासन, समाज एवं आर्थिक स्थिति के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है। यूनानी साहित्य में टॉलमी का भूगोल, प्लिनी दी एल्डर की नेचुरल हिस्ट्री, एरिस्टोब्यूलस की 'हिस्ट्री ऑफ दी वार' स्ट्रेबो का भूगोल आदि विशेष उल्लेखनीय है। 'पेरीप्लस ऑफ दी एरिथ्रीयन सी' पुस्तक में बन्दरगाहों व व्यापार का विस्तृत विवरण है।

चीनी विवरण – चीनी यात्रियो में फाह्यान, सुंगयुन, ह्वेनसांग एवं इत्सिंग का वृतान्त महत्वपूर्ण है। फाह्यान गुप्त सम्राट चन्द्रगुप्त II के समय (399–414 ई.) भारत आया था। ह्वेनसांग को 'यात्रियों का राजकुमार' कहा जाता है। उसने नालन्दा विश्वविद्यालय में शिक्षा ग्रहण की। वह हर्षवर्द्धन के राज्य काल में 629 ई. से 644 ई. में भारत आया था और उसने अपनी पुस्तक सीयूकी में भारत के समकालीन इतिहास का वर्णन किया है। इत्सिंग ने सातवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में 672 से 688 ई. तक भारत भ्रमण किया। इससे नालन्दा, विक्रमशिला विश्वविद्यालय के साथ ही भारतीय संस्कृति व समाज की भी जानकारी मिलती है।

तिब्बती वृतान्त– तिब्बती वृतान्त में तारानाथ द्वारा रचित कंग्यूर व तंग्यूर ग्रन्थों को उपयोगी माना गया है। अरबी यात्री और भूगोलवेत्ताओं ने भी भारत के सम्बन्ध में जानकारी दी है। मसूदी ने अपनी पुस्तक 'मिडास ऑफ गोल्ड' में भारत का विवरण दिया है और लिखा है कि भारत का राज्य स्थल व समुद्र दोनों पर था। सिन्ध के इतिहास 'चचनामा' में तथा सुलेमान नवी की पुस्तक 'सिलसिलात–उल–तवारीख' में पाल–प्रतिहार शासको के बारे में लिखा है। अरबी लेखकों में अल्बेरूनी (तारिख ए हिन्द) सबसे महत्वपूर्ण है, जिसने संस्कृत भाषा सीखी व मूल स्रोतों का अध्ययन करके अपनी पुस्तक तारीख–उल–हिन्द में भारतीय समाज व संस्कृति के बारे में लिखा है।

(स) इतिहास के स्रोत के रूप में वंशावलियां

भारतीय इतिहास में वंश लेखन परम्परा का स्थान महत्वपूर्ण रहा है। वंशावली लेखन परम्परा व्यक्ति के इतिहास को शुद्ध रूप से सहेज कर रखने की प्रणाली है। यह एक ऐसी परम्परा है जिसमें वंशावली लेखक हर जाति–वर्ग के घर–घर जाकर प्रमुख लोगों की उपस्थिति में संक्षेप में सृष्टि रचना से लेकर उसके पूर्वजों की ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक घटनाओं का वर्णन करते हुये उस व्यक्ति का वंश क्रम हस्तलिखित पोथियों में अंकित करता है। वंशावलियों के अध्ययन से ही हमें जानकारी मिलती है कि हमारे पूर्वज कौन थे ?

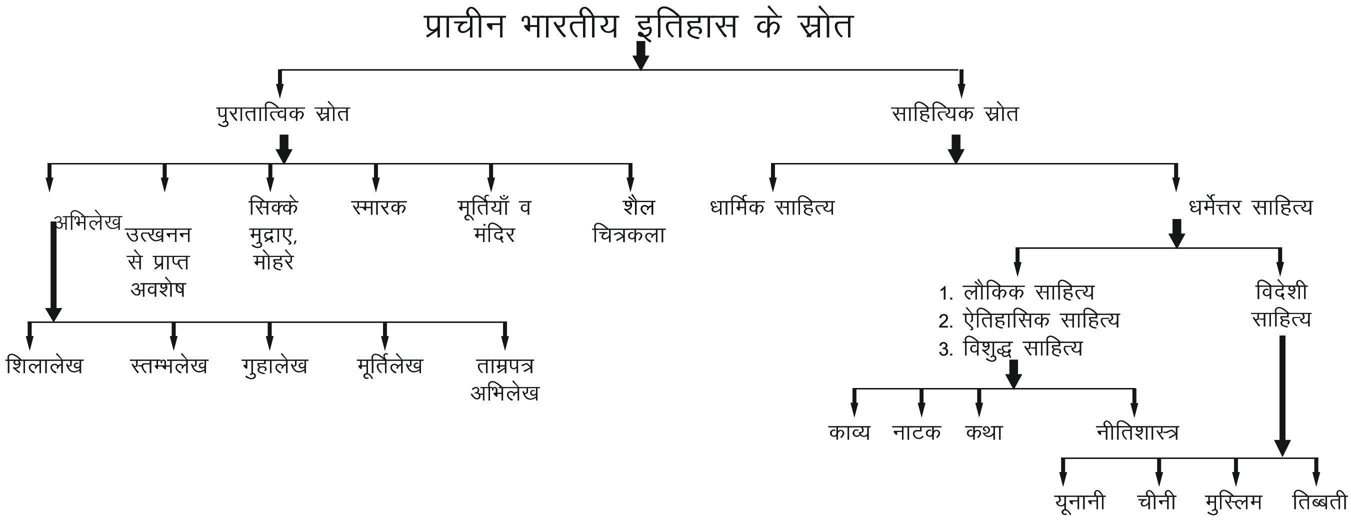

वंशावली लेखकों में मुख्य रूप से बड़वा, जागा, रावजी एवं भाट, तीर्थ पुरोहित, पण्डे, बारोट आदि प्रमुख है। ऐतिहासिक स्रोत की दृष्टि से वंशावलियाँ निम्नांकित बिन्दुओं की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण हैं –

(1) पुरोहितों द्वारा

दस्तावेजी न्यायिक साक्ष्य के रूप में मान्य है। इसमें पारिवारिक सम्बन्ध के विषय में कागज इत्यादि पर व किया जाता है इसका उद्देश्य उनके सदैव रिकार्ड के रूप में रखने का होता है। वर्णन में अक्षरों के साथ ही चिह्नों का भी प्रयोग करते हैं। मौखिक साक्ष्य से लिखित साक्ष्य अधिक प्रभाव पूर्ण होता है। निश्चित रूप से बहियाँ या वंशावलियाँ एक न्यायिक दस्तावेज है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 के अनुसार वंशावलियों बहियों इत्यादि को सुसंगत न्यायिक तथ्य के रूप में स्वीकार किया गया है।

जगदीश प्रसाद बनाम सरवन कुमार AIR 2003 P & H मामले में न्यायालय ने पण्डों की बहियों में की गई प्रविष्टियों को साक्ष्य के रूप में ग्प्रह्य माना। ऐसे कई मामले हैं जिसमें वंशावलियों व बहियों को साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया है।

(2) वंशावली लेखको को लोक इतिहासकार भी कह सकते हैं। पुरातन एवं मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन में वंशावलियाँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत रही हैं। हमारे पुरातन ग्रन्थ पुराणों में जो इतिहास उपलब्ध है उसमें वंशावलियों का महत्वपूर्ण आधार रहा है। कई ऐतिहासिक घटनाओं के प्रमाण वंशावलियों से मिलते हैं।

(3) वंशावलियों में प्रत्येक जाति व प्रत्येक व्यक्ति के इतिहास का लेखन हुआ है। उनके वंशानुक्रम की जानकारी हमें वंशावलियों से मिलती है। वंश

जैसे अशोक के अभिलेख, खारवेल का हाथीगुम्फा अभिलेख,गौतमीपुत्र सातकर्णी का नासिक अभिलेख एवं प्रयाग प्रशस्ति के बिना प्राचीन भारतीय इतिहास की जानकारी अधूरी है।

अशोक के अभिलेख खरोष्ठी एवं ब्राहमी लिपि में है। अशोक के शिलालेख, स्तम्भ लेख और गुहालेख तीनो प्रकार के अभिलेख मिलते हैं। अशोक के अभिलेख कला के भी उत्कृष्ट उदाहरण हैं। ये अभिलेख लम्बे–कलात्मक स्तम्भ व शिलाओं पर उत्कीर्ण हैं। जूनागढ़ का रूद्रदामन का शिलालेख भी काफी प्रसिद्ध है। स्तम्भ लेखों में अशोक के अलावा चन्द्र का मेहरोली स्तम्भ लेख, स्कन्द गुप्त का भीतरी स्तम्भ लेख, समुद्रगुप्त का प्रयाग स्तम्भ लेख प्रमुख है। ताम्र लेख से गुप्तो के इतिहास की जानकारी मिलती है। प्रभावती गुप्ता का ताम्र लेख विशेष उल्लेखनीय है। गुहालेखों में अशोक के बराबर गुहालेख, दशरथ के नागार्जुनी गुहालेख, सातवाहनों के नासिक व नानाघाट गुहालेख अधिक उपयोगी है। कई मूर्तियों के भी शीर्ष या अधोभाग में शासकों ने लेख लिखवाए हैं, जिनसे उनके बारे में जानकारी मिलती है। ये मूर्ति लेख कहलाते हैं। इन अभिलेखों के द्वारा विभिन्न शासको के समय की महत्वपूर्ण घटनाओं तथ्यों की जानकारी के साथ ही आर्थिक सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक जानकारियां मिलती हैं।

(3) सिक्के व मुद्राएँ

प्राचीन भारतीय इतिहास की जानकारी में सिक्कों, मुद्राओं व मोहरों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इनसे शासकों के नाम, तिथियाँ, चित्र, वंशपरम्परा, धर्म, गौरवपूर्ण कार्यों, कला, शासक की रूचि आदि की जानकारी मिलती है। गुप्तकालीन सिक्कों से हमें महत्वपूर्ण सूचनाएं मिलती हैं। समुद्रगुप्त के वीणा वादक व व्याघ्र निहन्ता सिक्के उसकी संगीत के प्रति रूचि व शौर्य को प्रदर्शित करते है।

सिक्के पर नहपान का चित्र समुद्रगुप्त का वीणाधारी सिक्का

इसी प्रकार कुमारगुप्त के कार्तिकेय प्रकार के सिक्के उसके शैव अनुयायी होने की पुष्टि करते है। सिक्कों से शासकों के राज्य विस्तार, उनके आर्थिक स्तर, धार्मिक विश्वास, कला, विदेशी व्यापार आदि की जानकारी मिलती है। सबसे पहले प्राप्त होने वाले सिक्के चाँदी व ताँबे के हैं। इन पर केवल चित्र है। इन्हे पंचमार्क या आहत सिक्के कहा जाता है। मौर्यों के बाद हिन्द–यूनानी शासकों ने लेख युक्त मुद्रा प्रारम्भ की। कुषाणों के समय स्वर्ण व ताम्र सिक्कें प्रचलन में आए। गुप्त काल में स्वर्ण व रजत मुद्रा चलन में थी। सिक्कों पर राजा का नाम, राज चिह्न, धर्म चिह्न व तिथि अंकित होती थी। कुछ विशेष घटनाओं की जानकारी भी सिक्को से मिलती है। समुद्र गुप्त के सिक्कों पर अश्व व यूप के चिह्न है व अश्वमेध पराक्रम लिखा है, इससे समुद्र गुप्त द्वारा अश्वमेघ यज्ञ किए जाने की जानकारी मिलती है। इसे एक सिक्के पर उसे वीणा बजाते हुये दिखाया है। बयाना (राजस्थान) व जोगलथम्बी (नासिक) से सिक्को का ढेर मिला है। जोगलथम्बी के सिक्को से शक सातवाहन संघर्ष की जानकारी मिलती है। गौतमीपुत्र ने शकों के सिक्कों पर अपना नाम अंकित करवाकर सिक्के जारी किये। सिक्कों के साथ ही मुहरें भी प्रचलित थी। इन पर राजा, सामन्त, पदाधिकारीगण, व्यापारी या व्यक्ति विशेष के हस्ताक्षर व नाम होते थे। बसाढ़ (प्राचीन वैशाली) से 274 मिट्टी की मुहरें मिली है।

–तिथिक्रम निर्धारण
–धार्मिक विश्वास की जानकारी
–कला पर प्रकाश
–व्यापार व आर्थिक स्तर की जानकारी
–साम्राज्य की सीमाओं का ज्ञान
–नवीन तथ्यों का उद्घाटन
–शासकों की रुचियों का ज्ञान

पुरातात्विक स्रोतों के अन्तर्गत भूमि पर एवं भूगर्भ में स्थित सभी अवशेष, स्तूप, चैत्य, विहार, मठ, मन्दिर, राजप्रसाद, दुर्ग व भवन सम्मिलित हैं। इससे उस समय की कला, संस्कृति व राजनैतिक जीवन की जानकारी मिलती है। मोहनजोदड़ो व हड़प्पा के अवशेषों से हमें वहां की सभ्यता व संस्कृति की जानकारी मिलती है। देवगढ़ व भीतरीगांव मन्दिर से गुप्तकालीन धार्मिक व सांस्कृतिक अवस्था की जानकारी मिलती है। स्मारकों से ही दक्षिणी–पूर्वी एशिया में भारतीय संस्कृति के विस्तार की जानकारी मिलती है। कम्बोडिया के अंगकोरवाट के स्मारक, जावा के बोरोबुदूर के मन्दिर भारत का अन्य देशों में औपनिवैशिक व सांस्कृतिक विस्तार की कहानी कहते है।

उत्खनन में

अने

वैभवशाली भारत की उपलब्धियाँ

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति, धर्म, समाज, कला साहित्य एवं विज्ञान प्रारम्भ से ही उत्कृष्ट रहे हैं। भारत को विश्व गुरू का दर्जा प्राप्त था। आर्थिक समृद्धता की बात करें तो भारत को सोने की चिड़िया कहा गया है। नैतिक एवं मानवीय आचरण में भी भारत सदैव अग्रणी रहा है। अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में भारत भूमि को माता(माता भूमिःपुत्रोऽहं पृथिव्याः) के रूप में माना है और सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में – 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के रूप में स्वीकार किया है। सम्पूर्ण मानव के कल्याण (सर्वेभवन्तु सुखिनः,सर्वेसन्तु निरामया) की कामना करने वाली हमारी संस्कृति ने एक आदर्श प्रस्तुत किया है। ऐसे कई उदाहरण है, जिनसे प्रकट होता है कि हमारा अतीत अत्यधिक वैभवशाली र

भारतीय संस्कृति का विश्व संचार

अंगकोरवाट का भव्य शिल्प अजन्ता–एलोरा की समानता बताते हैं। चम्पा अनाम पाण्डुरेग, इन्द्रपुर बाली, कलिंग जैसे नगरों के नाम या राम, वर्मा जैसे व्यक्तियों नाम भारतीय परम्परा से अटूट सम्बन्ध बताते है। इन देशों का रहन सहन परम्परा, पूजा पद्धति, शास्त्र विधि, नीति कल्पना, आचार व्यवहार आदि में भारतीय परम्परा झलकती है।

प्राचीन भारत में नाविक शक्ति

सिन्धु प्रदेश में सिन्धु नदी में छः हजार वर्ष पूर्व चलने वाले जलयानों का वर्णन विद्वानों ने किया है। संस्कृत में "नव" शब्द जलयान के लिए प्रयोग किया जाता है और उस समय इस विद्या को "नवगति" के नाम से जाना जाता था। बाद में उर्दू का शब्द "नाव", "नव" शब्द का पर्याय बना और अंग्रेजी का शब्द "नेवीगेशन" इस "नवगति" शब्द का रूपान्तर है। प्राचीन पुस्तकों के आधार पर यह ज्ञात हुआ है कि कोलम्बस के पैदा होने के एक हजार वर्ष पूर्व भारत में जो जलयान बनाए जाते थे, वह इतने शक्तिशाली थे कि वह हिन्द महासागर और प्रशान्त महासागर के खुले समुद्र में भयंकर समुद्री तूफानों को सफलतापूर्वक झेलते हुए एक हजार यात्रियों को लेकर सुदूर देशों को जा सकते थे। इसी प्रकार के एक जहाज में प्रसिद्ध बौद्ध पर्यटक फाह्यान दक्षिणी भारत से चीन को गया था, ऐसा उसने अपने यात्रा–विवरण में लिखा है। वह पहले लंका से जावा को गया फिर जावा से चीन को गया।

पांच–छः हजार वर्ष पूर्व हमारे यहाँ विकसित बन्दरगाह थे। उत्खनन में प्राप्त सौराष्ट्र का लोथल बन्दरगाह, शास्त्र शुद्ध प्रणाली से बना था। मिस्र, मेसोपोटामिया, ईरान आदि देशों से इसी बन्दरगाह से व्यापार होता था। 756 फीट लम्बे व 126 फीट चौड़े, 60 से 75 टन माल वाहक जहाज सीधे घाट तक पहुँच जाते थे। इसके लिये पूर्व से पश्चिम 1400 सौ फीट लम्बी दीवार थी ताकि भार के समय जहाजों के लिये पर्याप्त गहराई तक पानी बना रहे। वहाँ पर जलपोत निर्माण व छोटी नौकाएँ बनने की कार्यशाला भी थी। पश्चिमी तट पर सोपारा व भृगुकच्छ भी प्रसिद्ध बन्दरगाह थे। प्रथम शताब्दी में पेरीप्लस में चोल, दभोल, राजापुर, मालवण, गोवा, कोटायम् कोणार्क, मच्छलीपट्टम एवं कावेरीपट्टम के बन्दरगाहों का उल्लेख हैं। अरब सागर का प्राचीन नाम रत्नाकर व बंगाल की खाड़ी का नाम महोदधि था। जातक में 10 यात्रियों को ले जाने वाले जलपोतों का उल्लेख है। सिन्धु–सरस्वती सभ्यता की अनेक मोहरों व पात्रों पर जलपोतों के चित्र हैं। सांची व भरहूत शिल्प में चप्पू वाले पोत व केबिन वाली नौका के साक्ष्य है।

धार के राजा भोज द्वारा लिखित पुस्तक 'युक्तिकल्पतरु' में नौका निर्माण एवं नौकाओं के प्रकार का विस्तृत उल्लेख है। दिशा ज्ञान के लिये भारतीय नाविकों द्वारा 'लौह मत्स्य यन्त्र' का प्रयोग करने का उल्लेख कुछ अरब यात्रियों ने किया है। मेगस्थनीज ने नौ दलों के नौका संगठन का भी उल्लेख किया है। नौकाओं का समूह जब सागर में चलता था तो नौकाध्यक्ष उस समूह का प्रमुख अधिकारी होता था। प्रत्येक नौका के प्रमुख को कर्णधार या महासार्थ कहा जाता था। पतवार सम्भालने का कार्य 'नियामक' करता था। जलपोत के प्रबन्ध के लिये स्वतंत्र अधिकारी रहते थे जिन्हें 'दत्ररश्मिग्राहक' कहते थे।

भारत में प्रागैतिहासिक, पाषाण संस्कृति

विद्वानों ने अतीत में मानव द्वारा किए गए कार्य–कलापों को दो भागों में बाँट लिया है, जबसे मानव ने पढ़ना–लिखना सीखा है तबसे वर्तमान तक के क्रिया–कलापों को इतिहास (History) में सम्मिलित किया है और इससे पूर्व के मानव के क्रिया कलाप 'प्राक् इतिहास' (Prehistory) के अन्तर्गत सम्मिलित है।

भारत में गत शताब्दी में उत्खनन के द्वारा विद्वानों ने कई ऐसे स्थल ढूँढ़ निकाले हैं, जहाँ पर प्रारम्भिक काल में मानव का निवास था। उत्खनन में उनके द्वारा प्रयोग में ली गई सामग्री औजार, बर्तन एवं जानवरों की अस्थियाँ प्राप्त हुई हैं। प्रारम्भिक मानव के अधिकांश उपकरण पत्थर के थे। इसीलिए हम इस समय के मानव को पाषाण युगीन मानव कहते हैं और जिस काल में पाषाण उपकरणों का प्रयोग होता रहा उसे पाषाण काल कहते हैं।

इतिहासकारों के अनुसार मानव ने लम्बे समय तक इन पाषाण उपकरणों का प्रयोग किया है। भारत में शिवालिक पहाड़ियों में 20 लाख वर्ष पुराने पाषाण उपकरण मिले हैं। प्रारम्भ में ये उपकरण के बजाय सामान्य पत्थर से प्रतीत होते थे। धीरे–धीरे इसमें विकास हुआ। प्राप्त पाषाण उपकरणों के आधार पर पाषाण युग को तीन भागों में बाँटा जा सकता है –

1. पुरापाषाण काल(Paleolithic Age), 2. मध्यपाषाण युग (Mesolithic Age), 3. नव पाषाण काल (Neolithic Age)

पुरापाषाण काल के उपकरण 20 लाख वर्ष पूर्व मानव ने प्रथम बार बनाये थे, जो आकार में बड़े व मोटे हैं। सुगढ़ नहीं है। इस काल को भी विद्वानों ने निम्न (Lower), मध्य (Middle) व उच्च (Uper) पुरापाषाण काल में विभाजित किया है।

पुरापाषाण उपकरण

नवपाषाण उपकरण

मध्यपाषाण युग में पत्थरों का आकार छोटा होता गया। लघु आकर के कारण ही इन्हे 'सूक्ष्म पाषाण उपकरण (Microlithic Tools) कहते हैं। गुजरात, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, केरल के पाषाण पुरास्थलों से जो तिथियाँ प्राप्त हुई है उनसे इसका काल निर्धारण 12 हजार वर्ष पूर्व का है। इस समय का मानव आखेटक खाद्य संग्राहक अवस्था में रहने लगा और पशुपालन की ओर अग्रसर हुआ। नदी के तटो व झीलों के किनारे मानव लकड़ी व घासफूस से बनी गोल झोपड़ियों में

रहने लगा। मिट्टी के पात्र उपयोग में लेने लगे और खाद्य सामग्री को पकाने भी लगा था।

नवपाषाण काल का मानव पशुपालन व कृषि कार्य की ओर अग्रसर हुआ। इस समय लोगों ने ऐसे उपकरण बनाना शुरू किया, जो कृषि कार्य एवं पशुपालन के लिए उपयोगी सिद्ध हए। इनमें मुख्य रूप से कुल्हाड़ियां, बसूला, छिद्रित वृत, हथौड़ा, सिललोढ़, ओखली आदि मुख्य थे। ये उपकरण बेसाल्ट जैसे कठोर पत्थर के थे जिन्हें घिसकर चिकना किया जाता था। कृषि कार्य ने धीरे धीरे मानव को एक जगह टिक कर रहने व बसने को मजबूर कर दिया। इसी के साथ आर्थिक व सांस्कृतिक विकास के नये युग की शुरूआत हुई।

प्रागैतिहासिक शैलकला (**Prehisthic Rock Art**)

आदिकाल में मानव प्रारम्भ में पर्वतीय एवं नदी घाटीय क्षेत्र में गुफाओं, चट्टानों में बने प्राकृतिक आश्रयस्थलों जिन्हें शैलाश्रय कहा जाता है, में निवास करता था। उच्चपुरा पाषाण

महाकाय साण्ड–अलनियां, कोटा

काल से ही मानव द्वारा आश्रय स्थल के रूप में उपयोग किये जाने के प्रमाण मिले हैं। शैलाश्रय की छतों –दीवारों पर तत्कालीन मानव द्वारा जीवन के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित चित्रांकन किया गया है, जिन्हे शैलचित्र कहते हैं। मानव ने जीवन के विभिन्न पक्षों की अभिव्यक्ति चित्रों के माध्यम से की है। इनसे प्रारम्भिक मानव के सांस्कृतिक, सामाजिक, व धार्मिक जीवन की जानकारी मिलती है। दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान, उत्तरी राजस्थान शेखावटी क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में ऐसे शैलचित्र मिले है। मध्य प्रदेश का भीमबेटका व पचमढ़ी भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसी प्रकार अजन्ता की चित्र राशि, दुर्गों व महलों के भित्तिचित्र भी प्राचीन भारतीय इतिहास की अभिव्यक्ति करते शैल चित्रों ने तत्कालीन मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को उजाकर किया है और हमें उस समय की संस्कृति का ज्ञान कराते है। सम्पूर्ण भारत देश के पर्वतीय व नदीय क्षेत्र में शैल चित्र प्रचुर मात्रा में है। इस दृष्टि से भीमबेटका (मध्यप्रदेश) विश्व विख्यात है और विश्व विरासत की श्रेणी में है। मध्यप्रदेश के अन्य स्थानों में पंचमढ़ी, भोपाल, होशंगाबाद, विदिशा, सागर, उत्तर प्रदेश में मिर्जापुर, राजस्थान में चम्बल नदी घाटी क्षेत्र, बाराँ, आलनियां विलासगढ, दर्रा, रावतभाटा, कपिलधारा, बून्दी व विराट नगर (जयपुर), हरसौरा (अलवर) व समधा आदि स्थानों पर शैलाश्रयों में शैलचित्र मिले है।

पुराविद् वी.एच. सोनवाने को चन्द्रावती (गुजरात) से मध्य पाषाण युगीन उपकरणों पर रेखांकन मिला है। इससे इसका काल मध्य पाषाण युग तो स्वतः ही सिद्ध हो जाता है। डॉ. वी.एस. वाकणकर इनका समय उच्च पुरा पाषाण से मानते हैं। ये चित्र अधिकांशतया लाल व गेरू रंग के हैं। शैल चित्र कला का अध्ययन भारत मे ही नहीं बल्कि विश्व के 22 देशों में शोध कार्य किया जा रहा हैं, इस हेतु राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगठन बने हुए हैं।

1856 में लाहौर से कराची रेल्वे लाइन हेतु पटरियाँ बिछाने का कार्य चल रहा था। लाइन पर रोड़िया बनाने के लिए पत्थर की कमी को देखते हुए पास के टीलों से ईटें

निकालकर बिछाने लगे। लेकिन उन्हें यह पता नहीं था कि वे विश्व की एक महान् सभ्यता से सम्बन्धित पुरास्थल हड़प्पा के भग्नावशेष निकाल रहे हैं। बर्टन बन्धुओं द्वारा 1856 में हड़प्पा स्थल की सूचना सरकार को दी गई।1861 ई. में कनिंघम के निर्देशन में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग की स्थापना की गयी। 1904 ई. में जॉन मार्शल को इस विभाग का निदेशक बनाया गया। 1921 ई. में दयाराम साहनी हड़प्पा स्थल का ने उत्खनन किया। 1922 ई. में राखालदास बनर्जी ने मोहनजोदड़ो का प

लगभग 917 स्थान भारत में,, 481 पाकिस्तान व 2 अफगानिस्तान में है। इसका विस्तार पश्चिम से पूर्व तक 1600 कि.मी. व उत्तर से दक्षिण तक 1400 कि.मी. था। इसका विस्तार अफगानिस्तान(शोर्तगोई व मुण्डीगाक), बलूचिस्तान (सुत्कागेण्डोर, सुत्काखोह, बालाकोट), सिन्ध(मोहनजोदड़ो, चहूंदड़ो, कोटदीजी, जुदीरजोदड़ा), पंजाब (पाकिस्तान– हड़प्पा, गनेरीवाल, रहमान ढेरी, सरायखोला, जलीलपुर), पंजाब (रोपड़,सघोल), हरियाणा (बनावाली, मीताथल, राखीगढी), राजस्थान (कालीबंगा, पीलीबंगा), उत्तरप्रदेश (आलमगीरपुर, हुलास) गुजरात (रंगपुर, धौलावीरा, प्रभास पाटन, खम्भात की खाडी) व महाराष्ट्र (दैमाबाद) था।

सरस्वती नदी

सिन्धु नदी व उसकी सहायक नदियों के क्षेत्र में लगभग 40 बस्तियाँ रही है। लगभग दो तिहाई बस्तियां वर्तमान लुप्त सरस्वती नदी क्षेत्र में थी। 250 बस्तियां सरस्वती नदी प्रवाह क्षेत्र से बाहर थी। सरस्वती नदी व उसकी सहायक नदियों का प्रवाह क्षेत्र सिन्धु व गंगा के बीच का क्षेत्र था। वैदिक काल में सरस्वती नदी लोगों के जीवन का आधार थी। वैदिक साहित्य में इसे 'नदीतमे देवीतमे, अम्बेतमे' कहा है। पिछले वर्षों में विद्वानों ने हवाई व भू सर्वेक्षण से सरस्वती नदी के प्रवाह मार्ग को रेखांक्ति करने का प्रयास किया है। उपग्रह से प्राप्त जल प्रवाह के चिन्हों से, ड्रिलिंग मशीनों की सहायता से भूगर्भ से निकाले गए सम्भावित जल के अध्ययन से, पुराऐतिहासिक एवं वैज्ञानिक अध्ययनों से यह सिद्ध हो गया है, कि प्राचीन समय में सरस्वती नदी का अस्तित्व था। सरस्वती नदी का निकास हिमालय की शिवालिक पर्वत श्रेणियों में माना पर्वत से था। आदि बद्री से समतल में उतरती थी। इसके बाद कुरूक्षेत्र और सिरसा, झाँसी, अग्राहेहा, हनुमानगढ, कालीबंगा में होती हुई, अनूपगढ व सूरतगढ तक बहती थी। अनेक भागों में समुद्र में मिलती थी। एक शाखा प्रभास पट्टन में जाकर सिन्धु सागर में मिलती थी। दूसरी शाखा सिन्धु में प्रविष्ट होकर कच्छ के रण में समा जाती थी। इसकी लम्बाई 1600 कि.मी. ओर चौडाई 3 से 12 कि.मी. तक थी। प्रसिद्ध पुराविद डॉ. वी.एस. वाकणकर ने सरस्वती के प्रवाह मार्ग को जानने के लिए अपने दल के साथ अभियान चलाया था ओर 4000 कि.मी. की यात्रा की थी। भूगर्भीय परिवर्तनों के कारण व मूल जल स्रोतों से पानी न मिलने से धीरे धीरे यह नदी लुप्त हो गई।

सिन्धु स्थापत्य कला

नगर नियोजन– सुनियोजित नगर नियोजन यहाँ की प्रमुख विशेषता थी।प्रत्येक नगर में ऊँचे चबूतरे पर गढी और नीचे समतल पर नगर भाग। गढ़ में राजा पुरोहित व अन्य प्रमुख व्यक्तियों का निवास था। मोटी दीवार का परकोटा होता था। परकोटे की दीवार काफी चौडी थी। नीचे समतल पर नगर बसा रहता था। नगर में एक–दूसरे को समकोण पर काटती हुई चौडी सडकें होती थीं जिसकी चौडाई 9 से 34 फीट थी। एक सडक 34 फीट की मिली है, जो संभवतया राजमार्ग रहा होगा। गलियाँ एक से 2.2 मीटर तक होती थी। कालीबंगा की सडके 1.8, 3.6, 5.4 व 7.2 मी. चौडी होती थी। बड़ी ईटों की आकृति का अनुपात 1:2:4 था। सामान्य ईटे $7\frac{1}{2} \times 15 \times 30$ इंच की थी। परकोटे के लिए ईटे $10 \times 20 \times 40$ इंच की थी। नालियों से पानी की निकासी की उचित व्यवस्था थी। पक्की ईंटों से मिस्रवासी भी परिचित नहीं थे। साधारणतः प्रत्येक घर में 3–4 कक्ष, स्नानागार, शौचालय, पाठशाला व कुंआ होता था। मध्य में आंगन होता था। प्रत्येक घर में जल निकासी के लिये नालियों का प्र

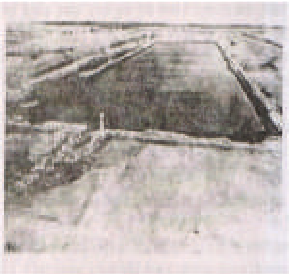
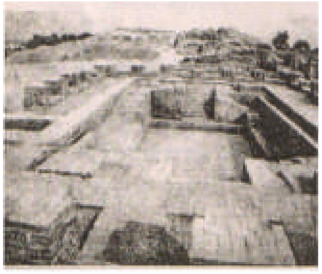

लोथल का विशाल गोदीवाड़ा   विशाल स्नानागार,मोहनजोदड़ो

विशाल स्नानागार – मोहन जोदड़ो का यह महत्वपूर्ण भवन है जिसका आकार 39×23×8 फीट है। इसमें ईटों की सीढियाँ हैं। तीन तरफ बरामदे हैं। फर्श व दीवारों पर ईटों का प्रयोग है। पास में ही एक कुएँ के भी अवशेष मिले हैं जो जल का स्रोत था। उत्तर की ओर छोटे–छोटे आठ स्नानागार भी बने हुए हैं।

*विशाल अन्नागार–*हडप्पा व मोहनजोदड़ो से विशाल अन्नागार के अवशेष मिले हैं। मोहनजोदड़ो का अन्नागार 45.71×15.23 मीटर का है। दो खण्डों में विभाजित हड़प्पा के अन्नागार का क्षेत्रफल 55×43मीटर, जो पानी से बचाव हेतु ऊँचे चबूतरे पर बने हुए हैं। प्रत्येक खण्ड में 6–6 की दो पक्तियों में भण्डारण कक्ष हैं। दोनो के मध्य 23 फुट की दूरी है। इसका प्रवेश द्वार रावी की ओर से था। ऐसे अन्नागार मेसोपोटामिया के नगरों में भी थे।

विशाल जलाशय व स्टेडियम – धौलावीरा के उखनन से 16 छोटे बडे जलाशय प्राप्त हुये हैं, जिनसे हमे तत्कालीन जल सग्रहण व्यवस्था की जानकारी होती है। दुर्ग के दक्षिण में शिला को काट कर 95×11.42×4 मीटर का जलाशय प्रमुख उदाहरण है।

शैल उत्कीचित जलाशय,धौलावीरा, जुता हुआ खेत कालीबंगा

इसके अलावा धौला वीरा से विशाल स्टेडियम के प्रमाण मिले हैं। स्टेडियम का आकार 283×45 मीटर है। स्टेडियम के चारो तरफ दर्शको के बैठने के लिए सोपान बने हुए हैं। समारोह स्थल दुर्ग की प्राचीर से जुडा हुआ है ओर इसकी चौडाई 12 मीटर है।

विशाल गोदी बाड़ा – लोथल से पक्की ईटो का एक ढांचा मिला है जिसे पुराविद् एस.एस. राव ने गोदीवाडा या डॉक यार्ड (बन्दरगाह का महत्वपूर्ण हिस्सा) के रूप में पहचाना है। इसका औसत आकार 214×36 मीटर है। वर्तमान गहराई 3.3 मीटर है। उत्तरी दीवार में 12 मीटर चौड़ा प्रवेश द्वार था जिससे जहाज आते थे। प्रवेश द्वार भोगवा नदी से जुडा था, जिससे गोदी में पानी आता था। राव लिखते हैं कि लोथल की गोदी फिनिशिया और रोम की गोदियों से कहीं अधिक विकसित एवं प्राचीनतम थी। लोथल का डाकयार्ड वर्तमान विशाखापटनम् में बने डाक यार्ड से बड़ा है।

सिन्धु सरस्वती सभ्यता की कला, लिपि एवं विज्ञान

यहाँ की सभ्यता से प्राप्त अवशेषो में पत्थर की मूर्तियाँ,

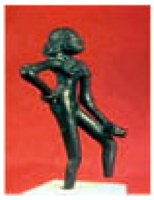

बैल की आकृति, नर्तकी की कांस्य मूर्ति, मुहर पर स्वस्तिक

मणके, मृद्भाण्ड, मुहरें, कास्य मूर्तियाँ व पात्र यहाँ की कला के उत्कृष्ट प्रमाण है। यहां से शैलखड़ी की योगी मूर्ति मिली है नर्तकी की कांस्य और मिट्टी दोनो की मूर्तियां मिली है। कास्य मूर्ति की ऊँचाई 11½ से.मी. है। मृणमूर्तियों का विशाल भण्डार उस समय की विकसित मूर्ति कला का प्रतीक है। कूबड़दार बैल की मूर्तियां भी कला का प्रतीक है। मुहरों पर किए गए चित्रण से हमें यहां निवासियों की चित्रकला के प्रति रूचि की जानकारी

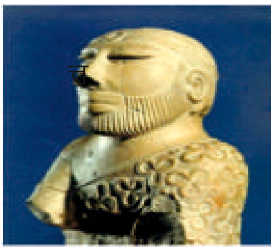
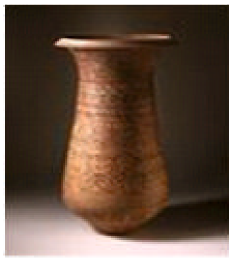

मृण मूर्ति,मोहनजोदड़ो   मृद्पात्र

मिलती है। इस सभ्यता से जो मुहरे प्राप्त हुई है उनके अग्रभाग पर पशु का अंकन संक्षिप्त लेख उत्कीर्ण है, पीछे एक घुण्डी बनी हुई है जो सम्भवतया टाँगनें के काम आती थी।

सिन्धु लिपि का विश्वसनीय अध्ययन अभी तक नहीं हो सका है। मुहरों पर अभी तक 2500 लेख उपलब्ध हो चुके हैं। 17 अक्षर का सबसे लम्बा व बड़े अक्षरों का अभिलेख धौलावीरा से मिला है। यहां की लिपि भाव चित्रात्मक लिपि है।

सिन्धु सरस्वती सभ्यता की मुहरें

सिन्धु लिपि–धौलावीरा

विज्ञान की दृष्टि से हम कह सकते हैं कि सिन्धु सरस्वती सभ्यता में गणित की संख्याओं के लिए प्रतीक चिह्न थे। गुणा और

योग जैसे अंक गणितीय प्रक्रियाओं से यहां के निवासी परिचित थे। उत्खनन से ऐसे पदार्थों के अवशेष मिले हैं जो सम्भवतया औषधि के रूप में काम आते थे। कालीबंगा व लोथल से खोपड़ी के अवशेष मिले है। काली बंगा से प्राप्त बालक की खोपड़ी पर 6 छेद हैं। इसमें कुछ छेद भर गये प्रतीत होते हैं। ये खोपड़ी की शल्य चिकित्सा के संकेत देते हैं। धातु विज्ञान के तथ्यों से भी परिचित थे। धातु की ढलाई एवं उपकरण निर्माण की विकसित विधि से वे परिचित थे। मोहनजोदड़ो से प्राप्त नर्तकी का कास्य मूर्ति, दैमाबाद से रथ की आकृति इसके प्रमाण है। मिट्टी के बर्तन कुम्हार के चाक पर बनाये जाते थे। पकाने के लिये 2.1 मीटर की भट्टियों के अवशेष मिले हैं। पकाने के बाद उन पर गेरू रंग करके तूलिका से काले रंग की डिजाइन बनायी जाती थी।

आर्थिक उपलब्धियां

सिन्धु–सरस्वती सभ्यता के वासियों की उन्नत कृषि व्यवस्था, पशुपालन, उद्योग धन्धे एवं आन्तरिक व बाह्य व्यापार के प्रमाण मिले हैं। नवीन साक्ष्य से संकेत मिले है कि इस सभ्यता के लोग घोड़े से भी परिचित थे। सुरकोटड़ा व रणघुण्डई से घोड़े के अवशेष मिले हैं। एस.आर.राव के अनुसार रंगपुर व लोथल से घोड़े की मिट्टी की मूर्तियाँ मिली है। डॉ. वी.एस. बाकणकर के अनुसार कच्छ सरस्वती नदी शोध अभियान के दौरान सरस्वती नदी के तट पर स्थित अनेक स्थानों से घोड़ों की अस्थियाँ मिली है।

उन्नत कृषि कार्य – अनेक स्थानों से प्राप्त विशाल अन्नागार संकेत देते हैं कि अन्न उत्पादन अच्छी मात्रा में होता था। उत्पादन से ही महानगरीय व्यवस्था का विकास हुआ। मुख्य उत्पादन गेहूँ, जौ, मोटे अनाजों में ज्वार, दाल, मटर, रागी, साम्बा आदि का उत्पादन होता था। कपास, खजूर, तिल व चावल का भी उत्पादन होता था जुताई के लिए लकड़ी के हल का प्रयोग होता था प्राक् हड़प्पा कालीन कालीबंगा से आड़ी व तिरछी हल रेखाओं से जुता हुआ खेत मिला है जो कि दोहरी फसल का संकेत देता है। फसल कटाई ताँबे के हँसिये व पत्थर के फलक से की जाती थी, जो कि लकड़ी के हत्थे पर लगा होता था।

उद्योग–व्यवसाय – यहाँ से उत्खनन में ताँम्बे व काँसे से निर्मित कलाकृतियां मिली है। ताम्र उपकरणों में मछली पकड़ने के काँटे, आरियां, तलवारें, दर्पण, छेणी, चाकू, भालाग्र, बर्तन आदि मिले हैं। काँसे की प्रसिद्ध नर्तकी की मूर्ति, बैल कुत्ते व पक्षियों की कलाकृतियाँ मिली हैं। इससे स्पष्ट है कि यहां धातु उद्योग विकसित था।

मिट्टी के बर्तन बनाने की कला से परिचित थे। मणके निर्माण का उद्योग भी विकसित था। इनसे बने आभूषण इस सभ्यता की कला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। लोथल व चहूँदड़ो से इसके कारखाने मिले हैं। ये मनके सोने, चाँदी, ताम्बे, पीली मिट्टी, शैलखड़ी, कीमती पत्थर, सीपी, शंख आदि के बनाये जाते थे। इस सभ्यता से लगभग 2500 मोहरें मिली है, जो अधिकांशतः सेलखड़ी से बनी है। इन पर पशुओं (एक सींग का पशु, बाघ, हाथी, सांड, गेंडा), पेड़–पौधे, मानव आकृतियां आदि के चित्र है जो हमें उस समय मानव गतिविधियों और धर्म का संकेत देते है। इस समय का वस्त्र उद्योग भी उन्नत था। कपास की खेती के व वस्त्रों के प्रमाण मिले हैं। कताई–बुनाई की तकलियाँ व तकुए भी मिले हैं।

व्यापार व वाणिज्य – इस समय आन्तरिक एवं विदेशी व्यापार दोनों ही उन्नत अवस्था में था। ताम्र खनिक, रत्न, उपरत्न एवं धातु निर्मित सामग्री–पात्र उपकरण आभूषण आदि का व्यापार होता था। सम्भवतया ताँबा राजस्थान के गणेश्वर से, सोना मैसूर से, चाँदी ईरान व अफगानिस्तान से, मणको के लिए कीमती पत्थर गुजरात व महाराष्ट्र से मंगाये जाते थे। मेसोपोटोमिया से व्यापारिक सम्बन्ध थे। इसकी जानकारी मेसोपोटोमिया से प्राप्त एक अभिलेख से होती है, सिन्धुवासियों के लिये मेलूहा शब्द का प्रयोग हुआ है। मेसोपोटामिया के विभिन्न नगरों से सिन्धु सरस्वती सभ्यता की लगभग 24 मोहरे मिली है। लोथल से एक बटन के समान गोलाकार मोहर मिली है। ऐसी मोहरे बहरीन द्वीप, फारस की साड़ी और मेसोपोटामिया के उप नगर से मिली है।

व्यापार के लिए वस्तुओं के विनिमय एवं माप तौल की एक निश्चित व्यवस्था थी। प्राप्त अवशेषों के आधार पर बाट के आकार घनाकार व गोलाकार था। ये चर्ट जैसार व अगेट के बने होते थे। बाट एक श्रृंखला में क्रमशः बढ़ते क्रम में 1,2,4,8,16,32,64 तक होते थे।

सामाजिक जीवन की प्रमुख विशेषताएं

सिन्धु–सरस्वती सभ्यता के अवशेषों से हमें जानकारी मिलती है कि उस समय के समाज में शासक व महत्वपूर्ण कर्मचारी वर्ग, सामान्य वर्ग, श्रमिक वर्ग एवं कृषक वर्ग था। शासक व महत्वपूर्ण कर्मचारी वर्ग गढ़ी में व अन्य वर्ग के लोग नगर भाग में रहते थे। समाज की सबसे छोटी इकाई परिवार था। मातृदेवी की मिट्टी की प्राप्त मूर्तियों से समाज में नारी का महत्व व परिवार के मातृसत्तात्मक होने की जानकारी मिलती है। सूती वस्त्रों के प्रमाण भी मिले हैं।

यहाँ के स्त्री एवं पुरूष दोनो ही आभूषण प्रेमी थे। मनको द्वारा बने यहां के आभूषण काफी प्रसिद्ध है। एक मुद्रा पर ढोलक का चित्र सिन्धु सरस्वती सभ्यता वासियों की वाद्य कला में रुचि का प्रमाण है। आखेट व संगीत के भी प्रमाण मिले है।

धार्मिक जीवन की उपलब्धियाँ

वृक्ष, जल एवं पशु पूजा – वृक्षों के भीतर रहने वाली आत्मा के रूप में वृक्षपूजा का इस समय प्रचलन था। एक मुहर में देवता को दो पीपल के वृक्ष के मध्य दिखाया गया है। सात मानवाकृतियां उसकी पूजा कर रही हैं। सिन्धु सरस्वती सभ्यता का प्राचीन धर्म के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मातृ देवी की उपासना, पशुपतिनाथ की कल्पना, वृक्ष पूजा, मूर्ति पूजा, जल की पवित्रता, तप के योग परम्परा आदि यहां की प्रमुख विशेषताएँ थी जो आज भी हमारे जीवन में देखने को मिलती हैं।

हड़प्पा से प्राप्त एक मूर्ति के गर्भ से एक पौधा निकलता हुआ है, सम्भवतया यह पृथ्वी माता का रूप है। सिन्धु–सरस्वती सभ्यता से प्राप्त एक मुहर पर एक पुरूष आकृति पद्मासन में बैठी है। इसके एक तरफ हाथी व बाघ है दूसरी तरफ भैसा व गेंडा है, नीचे हिरण है। एक अन्य मोहर में योगी मुद्रा में व्यक्ति

की यह आकृति त्रिमुखी एवं त्रिश्रृंगी है। नाग द्वारा पूजा करते हुये दिखाया गया है।

तप योग व यज्ञ – कालीबंगा, बाणावली, राखीगढ़ी एवं लोथल से ख़ुदाई में अग्नि कुण्ड व अग्निवेदिकाएँ मिली हैं। पद्मासन में बैठे योगेश्वर की मूर्ति मिली है। इसके अलावा भिन्न भिन्न योगासन मुद्रा में मिट्टी की कई मूर्तियां मिली है। यहाँ से प्राप्त मुहरों पर एक सींग वाले वृषभ का काफी चित्रण मिलता है। इसके अलावा कूबड़दार बैल, बिना कूबड़दार बैल, बाघ व हाथी का चित्रण मिलता है। बाद में पशुओं की देव रूप में पूजा होने लगी। विभिन्न पशु देवताओं के वाहन के रूप में प्रसिद्ध हुए। मोहनजोदड़ो से प्राप्त विशाल स्नानागार इस सभ्यता की जल की पवित्रता एवं स्नान ध्यान की परम्परा का प्रतीक है।

राजनैतिक जीवन– यद्यपि यहाँ की राजनैतिक व्यवस्था की स्पष्ट जानकारी नहीं है। सिन्धु–सरस्वती वासियों की मूल रूचि व्यापार करना थी। प्रशासनिक दृष्टि से साम्राज्य के चार बड़े केन्द्र रहे होगें– हड़प्पा मोहनजोदड़ो कालीबंगा व लोथल। सुव्यवस्थित नगर नियोजन स्वच्छता, जल संरक्षण आदि प्रतीको से प्रतीत होता है पूर्ण एवं कुशल राजसत्ता नियन्त्रण के प्रमाण मिलते हैं। व्यवस्थित नगर पालिका प्रशासन के भी संकेत मिलते हैं। अस्त्र–शस्त्र अधिक संख्या में न मिलना यहां के निवासियों की शान्ति प्रियता के संकेत देते है। हथियारों में कांसे की आरी, ताँबे की तलवारें, भाले के अग्रभाग, कटारें, चाकू बाणाग्र मिले हैं।

भारतीय सभ्यता के प्रमाण हमें उस समय की विदेशी संस्कृतियों में भी देखने को मिलता है। इनसे व्यापारिक सम्बन्धो के साथ ही सांस्कृतिक सम्बन्ध भी थे। भारत की तरह क्रीट में भी मातृ पूजा का प्रचलन था। मोहन जोदड़ो में भेड़ की आकृति में दाढ़ी बतायी है, सुमेर और बेबीलोन में बैलों में दाढ़ी बताई गई है। हड़प्पा की तरह ही सुमेरवासी अपने केसो को फीते से बांधते थे। हड़प्पा की तरह मिश्र की कब्रों से लघु मक्खी के आकार की गुरिया प्राप्त हुई है। इस प्रकार हम कह सकते है कि हमारी सभ्यता व संस्कृति का प्रभाव अति प्राचीन काल में विश्व अन्य संस्कृतियों पर था।

उपलब्धियाँ: वैदिक काल से महाजनपदकाल

वेदो की गिनती विश्व के सर्वश्रेष्ठ साहित्य में की जाती है और यही वेद वैदिक सभ्यता के आधार स्तम्भ हैं। इस सभ्यता के निर्माता आर्य थे। आर्य शब्द का प्रयोग जाति वाचक न होकर गुणवाचक रूप में किया गया है, जिसका शाब्दिक अर्थ है– श्रेष्ठ या उत्तम। वेदो से हमें इन्ही श्रेष्ठ व्यकित्यों की जानकारी मिलती है। वैदिक साहित्य में आर्य शब्द का अनेक स्थानों पर प्रयोग हुआ है। आर्यों के प्राचीन ग्रन्थ वेदो में विशद् ज्ञान भरा हुआ है। इनकी भाषा संस्कृत थी, जिसे देववाणी कहा जाता है।

कतिपय पश्चिमी विद्वानों ने आर्यो को बाहय आक्रमणकारी बताकर अपनी संकीर्ण मानसिकता का परिचय दिया है। आर्य यहीं के निवासी थे। वैदिक साहित्य में आर्यों को कहीं पर भी विदेशी नहीं कहा है। आर्यों ने भारतभूमि की प्रसंशा करते हुए नदियों को देवी, माँ कहा है। आर्य बाहर से नहीं आए बल्कि यहीं से सम्पूर्ण भारत में ईरान और यूरोप की ओर गए। मध्यएशिया में भारतीय संस्कृति के प्रमाण भारतीयों का इस क्षेत्र में प्रसार होने का प्रमाण है। नवीन अनुसंधानों से सिन्धु सरस्वती सभ्यता व वैदिक सभ्यता में कई समानताएं उजागर हुई है। दोनों का भौगोलिक क्षेत्र सप्त सैन्धव प्रदेश ही था। ऋग्वेद के नदी सूक्त में 21 नदियों का उल्लेख है, जिनमें पूर्व में गंगा व पश्चिम में कुम्भा (काबुल) नदी शामिल है।

भाषा एवं साहित्यिक समृद्धता

संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति का वैभव है और इस जैसी परिपूर्ण भाषा संसार में अन्य नहीं है। संसार के प्राचीनतम् वेद–संस्कृत भाषा में लिखे गए हैं। संस्कृत व्याकरण आज भी उतनी ही वैज्ञानिक है। आज अधिसंख्यक भाषाओं का आधार संस्कृत व्याकरण ही है। प्राचीन काल में जितना साहित्य संस्कृत में लिखा गया, उतना अन्य किसी भाषा में नहीं मिलता है। लिपि का विकास ब्राह्मी लिपि के रूप में हुआ, जिसकी प्रसंशा मैकडॉनल्ड ने अपनी पुस्तक (History of Sanskrit Literature) में की है।

साहित्यिक दृष्टि से भारत में अत्यधिक समृद्धि थी। ऐसा कोई ज्ञान नहीं था जिसका उल्लेख वैदिक साहित्य में नहीं किया गया हो। वेदो को अपौरूषेय कहा गया है। हमारे ऋषियो ने लम्बे समय तक जिस ज्ञान का साक्षात्कार किया, उसका वेदो में संकलन किया गया है। इसलिए वेदों को संहिता कहा गया है। प्रारम्भ में इनको लिपि बद्ध नहीं किया गया। मौखिक रूप से सुनाकर इन्हे निरन्तर रखा, इसीलिए इन्हें श्रुति भी कहा गया है। वेद चार है। प्रत्येक वेद की संहिता से सम्बन्धित ब्राह्मण अरण्यक व उपनिषद है।

आर्यों का सबसे प्राचीनतम् ग्रन्थ ऋग्वेद हैं। इसमें 10 अध्याय और 1028 सूक्त हैं। इसमें छन्दों में रचित देवताओं की स्तुतियाँ हैं। प्रत्येक सूक्त में देवता व ऋषि का उल्लेख है। कुछ सूक्तों में युद्धों व आचार विचारों का वर्णन है। सामवेद में काव्यात्मक ऋचाओं का संकलन है। इसके 1801 मन्त्रो में से केवल 75 मन्त्र नये हैं, शेष ऋग्वेद के है। ये मंत्र यज्ञ के समय देवताओं की स्तुति में गाये जाते है। यज्ञों, कर्मकाण्डों व अनुष्ठान पद्धतियों का संग्रह यजुर्वेद में है। इसमें 40 अध्याय है एवं शुक्ल व कृष्ण यजुर्वेद दो भाग है। अन्तिम वेद अथर्ववेद में 20 मण्डल 731 सूक्त ओर 6000 मंत्र है। रचना अथर्व ऋषि द्वारा की गयी थी। इसका अन्तिम अध्याय ईशोपनिषद् है, जिसका विषय आध्यात्मिक चिन्तन है।

पुराण – पुराणों में इतिहास की सामग्री भरी पड़ी है। पुराणान्तर्गत इतिहास को विशेष महत्व दिया जाने लगा है। पुराणों में हमें विभिन्न घटनाओं का क्रमबद्ध इतिहास मिलता है। इनके रचयिता लोमहर्ष व उनके पुत्र उग्रश्रवा को माना जाता है। प्रमुख पुराणों में मत्स्य, वायु, विष्णु, ब्रह्माण्ड, भागवत्, अग्नि, मार्कण्डेय का नाम उल्लेखनीय है।

पुराणों में वंशावलियाँ मिलती हैं, इन्हें सर्वाधिक प्राचीन माना गया है। यह दूसरी–तीसरी शताब्दी की रचना है।इनसे गुप्तों के इतिहास व अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं की जानकारी मिलती है। पुराणों के अलावा 29 उपपुराण है। सूत्र साहित्य भी

महत्वपूर्ण साहित्य है। इसके द्वारा ऋषियों ने मनुष्य के सामाजिक व धार्मिक जीवन को नियमबद्ध करने का प्रयास किया है। इनमें कला सूत्र प्रमुख है जिसके तीन भाग है। श्रौत सूत्र, गृह्य सूत्र और धर्म सूत्र। वैदिक साहित्य में वेदांग, स्मृतियां (धर्मशास्त्र) एवं महाकाव्यों (रामायण व महाभारत) का महत्वपूर्ण स्थान है।

वैदिक काल में व्यवस्थित राजनैतिक जीवन की शुरूआत हो चुकी थी। इस समय की सबसे छोटी राजनैतिक इकाई 'कुल' थी। सबसे बड़ी इकाई 'राष्ट्र' थी। राष्ट्र–जन–विश–ग्राम व कुल राजनैतिक संगठन का अवरोही क्रम था। एक राष्ट्र में कई जन थे। कुल का मुखिया कुलुप, ग्राम का मुखिया ग्रामणी, विश का अधिकारी विशपति, जन का मुखिया गोप, देश या राज्य को राष्ट्र कहा जाता था, जिसका मुखिया राजा होता था। राजा का पद वंशानुगत होता था। ऋग्वेद में उल्लेख मिलता है कि कभी कभी राजवंश से चुनकर राजा बनाया जाता था। लोक कल्याणकारी राज्य का स्वरूप हमें उस समय भी दिखाई देता है। राजा को राज्याभिषेक के समय प्रजा हित की शपथ लेनी होती थी। जनता राजा को कर देती थी जिसे बलिहृत कहा जाता था। ऋग्वेद में 'पंचजना' का अनेक स्थानों पर मिलता है। पांच प्रमुख जन थे– अणु यदु तुर्वस, पुरू एवं दुह्य। ऋग्वेद में एक बड़े युद्ध का भी उल्लेख मिलता है, जो दस राज्ञ युद्ध के नाम से जाना जाता है। भरत जन के राजा सुदास का रावी (परूष्णी) नदी के तट पर दस जनो के राजाओं के साथ युद्ध लड़ गया था जिसमें सुदास की विजय हुई थी। दस राजाओं में पंचजन के अलावा अलि , पक्थ, भलानस, विसाणी व शिव जनपद थे। ऐसी मान्यता है कि राजा सुदास ने विश्वामि

प्राचीन भारत में गणतन्त्रात्मक शासन पद्धति एवं सवैधानिक व्यवस्था– आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व भारत में समृद्ध गणतन्त्रात्मक शासन पद्धति एवं संवैधानिक व्यवस्था के प्रमाण मिलते है। यह हमारी महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। बौद्ध कालीन गण राज्यों के विधान और शासन पद्धति गणराज्य का राजा या प्रमुख निर्वाचित व्यक्ति होता था। अर्थ शास्त्र में लिच्छवी गणराज्य के लिए 'राजा शब्दोपजीवी' संघ का प्रयोग किया है। अर्थात् वहां का प्रत्येक व्यक्ति अपने राज्य का राजा समझता है। उपराजा, भण्डारिक एवं सेनापति राजा की सहायता करते थे।

सभा या संस्था गणराज्यों के कुल प्रमुखों की सर्वोच्च सभा होती थी। इसमें विभिन्न विषयों पर विचार विमर्श करके निर्णय किया जाता था। जिस स्थान पर सभा की जाती थी उसे संस्थागार या संथागार कहा जाता था। संस्थागार में सदस्यों के एक निश्चित क्रम में बैठने की व्यवस्था आसन पन्नापक नाम का अधिकारी करता था। संस्था के अधिवेशन के लिए एक निश्चित संख्या गणपूर्ति (कोरम) आवश्यक थी। संस्था में सदस्य द्वारा औपचारिक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाता था। प्रस्तोता द्वारा प्रस्ताव पेश किये जाने के बाद उसे तीन बार दोहराया (अनुस्साव) जाता था, ताकि सभी उपस्थित सदस्य उसे सुन सके। प्रस्ताव के अनुमोदन के लिये सदस्यों से पूछा जाता था। जो सदस्य मौन रहते थे, उनकी सहमति मान ली जाती थी। वादविवाद के बाद सर्वसम्मति न बनने पर मतदान की भी व्यवस्था थी। विभिन्न रंगों की शलाकाओं द्वारा जो कि भिन्न मतों की सूचक थी, मतदान कराया जाता था। शालाका ग्राहपक नामक अधिकारी इन्हें एकत्र करता था। यह कार्य गोपनीय या खुले दोनों रूप में होता था। विवादित विषय कतिपय चयनित समितियों को सौंप दिया जाता था। गणंतत्रो की न्यायिक व्यवस्था का भी विशेष स्थान था। बुद्धघोष की अट्टकथा के अनुसार अपराधी की जाँच पड़ताल सात न्यायिक अधिकारियों द्वारा की जाती थी और उसके बाद ही उसे दण्ड दिया जाता था। हमारी वर्तमान संसदीय एवं संवैधानिक व्यवस्था में महा जनपद कालीन गणतंत्रीय व्यवस्था की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। प्राचीन भारत में प्रजातंत्र का यह अनुकरणीय उदाहरण था। लेकिन यह व्यवस्था लम्बे समय तक निरन्तर नहीं रह सकी। कालान्तर में मौर्य शासक चन्द्रगुप्त ने सम्पूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने का प्रयास किया। उसने केन्द्रीयकृत शासन व्यवस्था की स्थापना कर सम्पूर्ण भारत वर्ष को एक राजनैतिक इकाई के रूप में संगठित किया।

सामाजिक जीवन –प्रमुख विशेषताएं

वर्ण व्यवस्था – प्राचीन भारतीय समाज में वर्ण और आश्रम व्यवस्था तत्कालीन समाज की आधार शिला थी। ऋग्वेद के पुरूष सूक्त के दसवें मण्डल में, परमपुरुष से उत्पन्न भारतीय समाज के चार वर्णो (ब्राह्मण क्षत्रिय,वैश्य एवं शूद्र)का उल्लेख है, जिन्हें परम् पुरूष से उत्पन्न बताया है। इसके अनुसार समाज एक व्यक्ति और वर्ण उसके अंग माने गये हैं। इन वर्णो का मुख्य आधार व्यवसाय था। इस काल में व्यक्ति को व्यवसाय अपनाने की पूर्ण स्वतंत्रता थी। एक ही परिवार के लोग ब्राह्मण क्षत्रिय या वैश्य हो सकते थे। उत्तर वैदिक काल में वर्ण भेद व्यवस्था का और अधिक विकास हुआ। लेकिन आधार कर्म ही था। शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ का कथन है कि कोई भी व्यक्ति ज्ञान से ब्राह्मण बनता है न कि जन्म से। इस समय अन्तवर्णीय विवाहों के अनेक उदाहरण है। इस व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य व्यावसायिक कुशलता का विकास था। वर्ण परिवर्तन सम्भव था जैसे ऐतरेय ब्राह्मण ग्रन्थ का कर्ता महिदास किसी अज्ञात आचार्य की पत्नी इतरा (शूद्र वर्ण) का पुत्र था, इसीलिये ऐतरेय कहलाया। वेद व्यास का भी इसी प्रकार का उदाहरण है।

सूत्र काल में वर्ण भेद में जन्मना दृढता आने लगी। गौतम बुद्ध के समय वर्ण व्यवस्था विकृत व अधिक कठोर हो गई एवं आपसी भेद बढ़ गए। इसीलिए बौद्ध साहित्य में वर्णभेद की कटु आलोचना की गई। वर्ण व्यवस्था के विकृत रूप से ही धीरे धीरे जाति व्यवस्था बनी। कर्म आधारित वर्ण धीरे धीरे जन्म आधारित जातियां हो गई। वैदिक सभ्यता से पूर्व भी भारतीय समाज अनेक व्यवसायगत समाजों में विभाजित था।

आश्रम व्यवस्था का विकास उत्तर वैदिक काल से माना जाता है उपनिषदो में अधिकांशतः 3 ही आश्रम थे– ब्रह्मचर्य, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम । धर्म सूत्र साहित्य एवं स्मृतिग्रन्थों में आश्रम व्यवस्था की जानकारी एवं इससे सम्बन्धित व्यवस्थाओं का उल्लेख मिलता है। व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन को एक आदर्श परिधि में व्यक्त करते हुये उसकी जीवन की गति को चार आश्रमों में विभाजित किया गया। मनुष्य से अपेक्षा की गई कि जीवन के इन चार सोपानों– ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ व को पार करते हुये अपने जीवन के चरम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त करेगा। मानव के इतिहास में जीवन के वैज्ञानिक विभाजन का प्रथम प्रयास, विश्व में भारतीय संस्कृति की ही देन है। पुरूषार्थ और आश्रमों के आदर्श एक दूसरे से जुड़े हुये है। मनुष्य ब्रह्मचर्य आश्रम में धर्म से परिचित होता है, शिक्षा प्राप्त कर उसकी साधना करता है, गृहस्थाश्रम में धर्मरत होकर अर्थ और काम को प्राप्त करता है, वानप्रस्थ में वह पूरा समय समाज का

1.स्वर्गवासी देवता (आकाशवासी)– द्यौस, वरूण, सूर्य, सावित्रि, अदिति, ऊषा, मित्र, विष्णु, अश्विन्, मित्र।
2.पार्थिव देवता (पृथ्वीवासी)– पृथ्वी, अग्नि, सोम, बृहस्पति, सरस्वती आदि।
3.वायुमण्डलीय देवता (अन्तक्षवासी)– वरूण, वात, इन्द्र, रूद्र, पर्जन्य, मारूत।

प्रार्थना, स्तुति व यज्ञ के माध्यम से देवताओं की पूजा अर्चना की जाती थी। प्रकृति की बहुदेवीय शक्तियों की उपासना के होते हुए भी ईश्वर की 'परम एकता' पर बल दिया गया है। उसी ईश्वरीय शक्ति ने सृष्टि का निर्माण किया है और लोग उसे भिन्न रूपों में पूजते हैं। ऋग्वेद में कहा गया है – 'एकम् सत विप्रा बहुधा वदन्ति' (सत्य ईश्वर एक ही है, ऋषियों ने उसका अलग अलग रूपों में वर्णन किया है) उपनिषदों में उसे परम ब्रह्म की संज्ञा दी है। आत्मा उसी परमब्रह्म का अंश है। ब्रह्म व आत्मा एक ही है।उपनिषदों के दर्शन के अनुसार ब्रह्म से ही सम्पूर्ण जगत की उत्पत्ति हुई है और यह जगत पुनः ब्रह्म में विलीन हो जाता है। आत्मा का ब्रह्म में विलय होना ही मोक्ष कहलाता है। उपनिषद् हमें सांसारिक वस्तुओं के प्रति मोह त्याग, मन व बुद्धि को निर्मल बनाना और सादगी व सदाचारी जीवन जीने का सन्देश देते हैं।हमारे अनेक महापुरूषों रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, महर्षि अरविन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती ने उपनिषद् दर्शन की विवेचना की है। श्रीमद्भगवद्गीता जैसे धर्म, दर्शन व नीति के महान् ग्रन्थ की रचना हुई एवं कर्मयोग पर चलने का संदेश मिला जिसका

आर्थिक जीवन की उपलब्धियाँ

पुरूषोत्तम मास (अधिक मास) द्वारा समायोजन आदि सिद्धान्त आज भी यथावत् चल रहे हैं।

भौतिक व रसायन विज्ञान

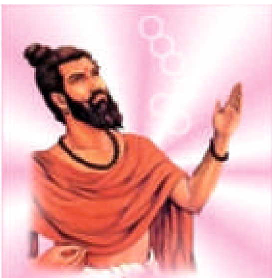

महर्षि कणाद

मेहरौली(दिल्ली) का लोह स्तम्भ

कणाद ऋषि वैशेषिक दर्शन के रचयिता एवं अणु सिंद्धान्त के प्रवर्तक थे। इनसे हमें प्राचीन भारत में भौतिक विज्ञान की प्रगति की जानकारी मिलती है। कणाद ने पदार्थ (matter) उसके संघटक तत्व व गुण (atoms) का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। अणुओं के संयोजन की विशद् धारणा भी कणाद ने दी। पदार्थ (matter) कार्यशक्ति (Power) गति (motion) व वेग (velocity) आदि विषयक भौतिक सिद्धान्त प्राचीन ऋषियों व विद्वानों ने दिये। यूरोप में 14वीं शताब्दी में भौतिकी के जो सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये, वे पांचवी शताब्दी के प्रशस्तपाद के 'पदार्थ धर्म सग्रह' व व्योम शिवाचार्य के 'व्योमवती' ग्रन्थों में उपलब्ध है।प्राचीन काल में भारतीयों को रासायनिक मिश्रण का भी ज्ञान था,इसका उदाहरण मेहरौली(दिल्ली) का लोह स्तम्भ है, जिस पर आज तक जंग नहीं लगा।

समाज से दूर वन में रह कर केवल ज्ञान की उपासना

वैदिक वाङ्मय एक दृष्टि में

ग्रंथ / वेद	ऋग्वेद	कृष्ण यजुर्वेद	शुक्ल यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
1. उपवेद	आयुर्वेद		धनुर्वेद	गांधर्ववेद	शिल्पवेद
2. ब्राह्मण ग्रंथ	ऐतरेय,	कौषितकी तैत्तरीय	– शतपथ	पंचविश	गोपथ
3. आरण्यक	ऐतरेय,	सांख्यायन तैत्तरीय	–बृहदारण्यक	जेमिनीय	–
4. उपनिषद्	ऐतरेय,	कौषितकी तैत्तरीय, कठ श्वेताश्वर	–ईशावास्य बृहदारण्यक	छांदोग्य–केन	प्रश्न,मुंडक, मांडुक्य
5. श्रोत सूत्र	आश्वलायन,	कौषीतकी आपस्तम्ब हिरण्यकेशी बोधायन	कात्यायन	खादिर, लाट्यायन द्राध्यायण	वैतान
6. गृह्य सूत्र	आश्वलायन,	कौषितकी मैत्रायणी,आपस्तंब–कात्यायन बोधायन,कठ,पारस्कर वेश्वानस		खादिर,गोभिल गौतम	कौशिक

अन्य धर्मसूत्र (स्मृतिया) 1. मनु स्मृति 2. अत्रि स्मृति 3. हारित 4. याज्ञवल्क्य 5. अशका 6. अंगिरा 7. यम 8. आपस्तंब 9. संवर्ग 10. कात्यायन 11. बृहस्पति 12. पाराशर 13. व्यास 14. शंख 15. लिखित 16. दक्ष 17. गौतम 18. शातातय 19. वशिष्ठ 20. देवल 21. सोम 22. नारद 23. यमदर्शन 24. प्रजापति 25. बौधायन 26. आश्वालयन 27. शोनक 28. काश्यप 29. गोभिल

वेदांग 1. शिक्षा 2. कल्प 3. व्याकरण 4. निरूक्त 5. छन्द 6. ज्योतिष

करने वाले तपस्वी लोगों का एक बहुत बड़ा वर्ग प्राचीन भारत में अध्ययन अध्यापन करता था। उनके आश्रम मानव का मार्ग दर्शन करने वाली प्रयोगशालाएँ थी। भारतीयों की भौतिक प्रगति के मूल में आध्यात्मिक प्रेरणा थी। भारत के प्राचीन विद्यापीठ संसार के अनेक देशों के छात्रो से भरे रहते थे। सभी देश भारत को गुरु मानते थे। इसीलिए मनु ने बड़े आत्म विश्वास से घोषणा की है कि – इस देश में जन्में ज्येष्ठ जनों के पास अपने चरित्र निर्माण की शिक्षा लेने हेतु संसार के मानव आए।

सारांश के रुप में हम कह सकते हैं कि भारत का अतीत वैभवशाली रहा है। पृथ्वी पर रोम यूनान मिश्र सुमेरिया आदि संस्कृतियाँ उदित हुई और अस्त भी हो गई। लेकिन भारतीय संस्कृति अनवरत रही। भारतीय संस्कृति ने केवल भारतीय ही नहीं अपितु विश्व के अनेक मानव समाजों को प्रभावित किया है। भारत देश आकार में विस्तृत, परम्परा से समृद्ध, प्राचीन विपुल साहित्य से भरपूर, सतत इतिहास व अनन्त संस्कृति से परिपूर्ण है। अनेक संघर्षों का मुकाबला करते हुए भारतीय संस्कृति अस्तित्व में रही। भारतीय धर्म, समाज एवं संस्कृति व इतिहास प्राचीन काल से ही अत्यधिक गौरवपूर्ण एवं समृद्ध रही है। अनेक विदेशी आक्रमणकारियों ने भारतीय संस्कृति व धर्म को बहुत ही आघात पहुचाया। लेकिन हमारी संस्कृति का स्वरूप इन आक्रमणों के बाद भी अक्षुण्ण बना रहा है। भारत भूमि वीर भूमि रही है जहाँ वीर महापुरुषों ने अपने प्राणों की अपेक्षा अपनी स्वतंत्रता एवं सम्मान को अधिक महत्व दिया। यहां के महापुरुषों जननायक, समाज सुधारकों ने भारतीयों को एक नया रास्ता दिखाया। वैदिक साहित्य से हमें जानकारी मिलती है लोगों में भारतमाता, भारतवर्ष या भारत खण्ड के प्रति सम्मान एवं भक्ति की भावना थी। यह हमारी राष्ट्रीयता का प्रतीक है। प्राचीन काल से ही भारत में राष्ट्रवाद के विकास के विभिन्न सोपान रहे हैं। भारत मे राष्ट्रवाद की अवधारणा वैदिक काल से ही चली आ रही है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अवधारणा को विशेष महत्व था। प्राचीन काल में वृद्धतर भारत का उल्लेख मिलता था। जिसके अन्तर्गत भारत का सांस्कृतिक साम्राज्य सम्पूर्ण मध्य एशिया में व्याप्त था। भारतीय संस्कृति ने अनेकाविध उपासना पद्धति का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया है।

अध्ययन बिन्दु

- ❖ प्राचीन काल में भारतीय संस्कृति का विश्व में प्रसार था।
- ❖ इतिहास में मानव का सम्पूर्ण अतीत समाहित होता है।
- ❖ कर्नल अल्काट के अनुसार मानव संस्कृति का उद्‌गम स्थल भारत ही है।
- ❖ विविधता में एकता भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता है।
- ❖ पुरातात्विक साक्ष्य प्राचीन भारतीय इतिहास की जानकारी के प्रामाणिक साधन हैं।
- ❖ कौटिल्य, कल्हण एवं बाणभट्‌ट ने भारतीय इतिहास लेखन परम्परा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।
- ❖ वैदिक साहित्य विश्व का प्राचीनतम साहित्य है।
- ❖ बौद्ध एवं जैन ग्रन्थ भारतीय इतिहास की जानकारी के महत्वपूर्ण स्रोत है।
- ❖ भारत में उत्तर पुरापाषाण काल के कई प्रमाण उपलब्ध है।
- ❖ व्यवस्थित नगर नियोजन, सिन्धु सरस्वती सभ्यता की प्रमुख विशेषता है।
- ❖ सिन्धु सरस्वती सभ्यता का विस्तार भारत सहित वर्तमान पाकिस्तान व अफगानिस्तान था।
- ❖ सरस्वती नदी वैदिक आर्यों के जीवन का प्रमुख आधार थी।
- ❖ सिन्धु सरस्वती वासी मिट्‌टी के बर्तन बनाने की कला से परिचित थे।
- ❖ सिन्धु सरस्वती वासी मुहर निर्माण कला में पारंगत थे।
- ❖ प्राचीन काल में कई भारतीय नाविकों ने समुद्री मार्ग से विदेश यात्राएँ की एवं भारतीय संस्कृति का विश्व में प्रसार किया।
- ❖ समुद्र पार भारतीय प्रदेशों को दीपान्तर कहा जाता था।
- ❖ नवपाषाण युग में मानव पत्थर के उपकरणों की सहायता से पशुपालन व कृषि कार्य करने लग गया था।
- ❖ सिन्धु सभ्यता के अधिकांश स्थल सरस्वती नदी घाटी क्षेत्र में स्थित है, इसीलिये इसे सिन्धु सरस्वती सभ्यता कहा जाता है।
- ❖ ऋग्वेदिक काल में सभा व समिति नाम की दो महत्वपूर्ण संस्थाएं शासन संचालन में महत्वपूर्ण योगदान करती थी।
- ❖ प्राचीन भारत में विज्ञान के क्षेत्र में ज्योतिष, खगोल, गणित, चिकित्सा, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान का ज्ञान काफी समृद्ध था।
- ❖ दशमलव प्रणाली एवं शून्य का आविष्कार भारत में ही हुआ था।
- ❖ उपनिषद् साहित्य भारतीय दर्शन साहित्य के महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. किस वेद में पृथ्वी को भारत माता के रूप में स्वीकार किया है?

   (अ) अथर्ववेद (ब) सामवेद
   (स) यजुर्वेद (द) ऋग्वेद

2. 'मिडास ऑफ गोल्ड' पुस्तक का लेखक कौन थे।

   (अ) मैक्समूलर (ब) डी.डी.कौशाम्बी
   (स) अल मसूदी (द) अल्बेरूनी

3. विक्रम सम्वत् की शुरुआत कब हुई ?
   (अ) 78 ई.पूर्व (ब) 57 ई.पूर्व
   (स) 78 ई. (द) 130 ई.

4. निम्नांकित में से कौन सा वेदांग नहीं है –
   (अ) शिक्षा (ब)व्याकरण
   (स) ज्योतिष (द)सूत्र

5. प्राचीन भारत में नौका शास्त्र के ग्रन्थ 'युक्तिकल्पतरू' के लेखक का नाम था –
   (अ) राजा भोज
   (ब) गौतमी पुत्र सातकरणी
   (स) भास्कराचार्य
   (द) बाणभट्ट

6. ऋग्वेदिक आर्यो का भौगोलिक क्षेत्र था –
   (अ) ईरान
   (ब) अफगानिस्तान
   (स) दो आब प्रदेश
   (द) सप्तसैन्धव

7. सिन्धु सरस्वती सभ्यता में विशाल स्टेडियम के अवशेष कहाँ प्राप्त हुए हैं–
   (अ) लोथल
   (ब) राखीगढ़ी
   (स) धौलावीरा
   (द) मोहनजोदड़ो

8. महाजनपद काल ने जिस स्थान पर सभा की बैठक होती थी उस स्थान को कहते थे–
   (अ) समिति
   (ब) सभा
   (स) आसन्न प्रज्ञापक
   (द) संस्थागार

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1 लुप्त सरस्वती नदी शोध अभियान किन पुरातत्ववेता ने प्रारम्भ किया था ?
2. दक्षिणी पूर्वी एशिया में भारतीय संस्कृति का प्रसार किन किन देशो में हुआ ?
3. अंगकोरवाट के स्मारक किस देश में स्थित है ?
4. नव पाषाण युग की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
5. सिन्धु सरस्वती सभ्यता के लोग किस धातु से परिचित थे।
6. सिन्धु सरस्वती सभ्यता के अधिकांश लेख किस पर मिलते है ?
7. आरण्यक ग्रन्थों में किस विषय को प्रतिपादित किया है ?
8. त्रिपिटक क्या हैं ?
9. दस राज्ञ युद्ध किन किन के मध्य लड़ा गया ?
10. पंच जन में कौन कौन से जन सम्मिलित थे ?
11. तीन ब्राह्मण ग्रन्थों के नाम बताइए।
12. प्राचीन भारत में गणित के क्षेत्र में योगदान करने वाले दो विद्वानों के नाम बताइए।
13. भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में कणाद ने किस पद्धति का आविष्कार किया ?
14. 16 संस्कारों के नाम बताइए ।
15. चार पुरूषार्थ क्या है?
16. आश्रम व्यवस्था क्या है ?
17. दिल्ली में लौह स्तम्भ कहाँ स्थित है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. शैलचित्र कला के बारे में आप क्या जानते हैं ?
2. प्राचीन समाज व धर्म में त्रिऋण व यज्ञ व्यवस्था को समझाइए।
3. महाजनपद से क्या तात्पर्य है ?16 महाजनपदों के नाम लिखिए।
4. सभा व समिति क्या थी ?
5. उपनिषदों में किन विषयों का प्रतिपादन किया गया है ?
6. भारतीय इतिहास की जानकारी में विदेशी साहित्य का योगदान बताइए।
7. भारतीय इतिहास की जानकारी के लिए सिक्कों का महत्व बताइए।
8. वेदांग साहित्य क्या है ?स्पष्ट करिए।
9. सिन्धु स्थापत्य कला की प्रमुख विशेषताए बताइए।
10. आरण्यक साहित्य क्या है ?
11. सिन्धु सरस्वती कालीन प्रमुख उद्योगों का वर्णन करिए।
12. सिन्धु सरस्वती सभ्यता की मुहर निर्माण कला की विशेषताएँ बताइए।
13. कौटिल्य ने किन विषयों को इतिहास में सम्मिलित किया है।
14. मृदपात्र संस्कृतियों के नाम बताइए।
15. प्राचीन भारत में समुद्री यात्राएँ व नौका शास्त्र के बारे में आप क्या जानते हैं।
16. वंशावली क्या है ?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्राचीन भारतीय इतिहास की जानकारी में पुरातात्विक स्रोतो का वर्णन करिए।
2. प्राचीन भारतीय वैभव की जानकारी में वैदिक साहित्य की भूमिका का वर्णन करिए।
3. प्राचीन भारत में विज्ञान व कला के क्षेत्र में समृद्धता पर निबन्ध लिखिए।

4. प्राचीन भारत में राजनैतिक तंत्र व गणतन्त्रात्मक शासन प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन करिए।
5. प्राचीन काल में भारत के सांस्कृतिक साम्राज्य के विश्व में प्रसार का वर्णन करिए।
6. प्राचीन काल में भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता था। इस कथन के सम्बन्ध में प्राचीन भारत के आर्थिक वैभव को रेखांकित करिए।
7. भारत के प्राचीन धार्मिक वैभव पर एक निबन्ध लिखिए।
8. भारतीय इतिहास के स्रोत के रूप में वंशावलियों का महत्व बताइए।

उत्तरमाला बहुचयनात्मक प्रश्न –

1.(अ) 2.(स) 3.(ब) 4.(द) 5.(अ) 6.(द)
7.(स) 8.(द)